**ओ३म्**

**“श्रावणी पर्व अविद्या के नाश तथा विद्या की वृद्धि**

**करने का विश्व का एकमात्र मुख्य पर्व”**

**-मनमोहन कुमार आर्य, देहरादून।**

 भारत में श्रावण मास की पूर्णिमा को श्रावणी पर्व के रूप में मनाने की प्राचीन परम्परा है। यह पर्व आर्य पर्व है जिसमें वैदिक धर्म व संस्कृति के संवर्धन व उन्नयन का रहस्य विद्यमान है। श्रावण मास वर्षा ऋतु का मास होता है। इस माह में प्रायः प्रतिदिन अथवा अधिकांश दिनों में देश के अधिकांश भागों में वर्षा होती है जिससे नदियों का जल स्तर बढ़ जाता है और अनेक स्थान बाढ़ की चपेट में आ जाते हैं। वर्षा ऋतु में सड़क मार्ग से एक स्थान से दूसरे स्थान पर आने जाने में बाधायें भी आती हैं। देश ने विगत एक शताब्दी में उससे पूर्व शताब्दियों की तुलना में सभी क्षेत्रों में आशातीत प्रगति की है। अब पूर्व काल के समान वर्षा ऋतु लोगों को पीड़ित नहीं करती न कष्ट ही देती है। नगरों में अच्छी सड़के हैं, समृद्ध लोगों के पास कारें आदि हैं, वर्षा ऋतु में भी बसे व अन्य वाहन चलते हैं। अतः लोग वर्ष के अन्य दिनों की भांति ही कार्य करते हैं। यह बात अलग है कि पैदल व दो पहियां वाहनों वाले लोगों को आवागमन में कठिनाईयां होती हैं। अधिक वर्षा से नदियों का जल स्तर बढ़ जाने से अनेक स्थानों पर बाढ़ व जल भराव की स्थिति बनती है जिससे जन जीवन अस्त व्यस्त भी होता है। अतः आधुनिक समय में भी जहां सभी क्षेत्रों में प्रगति हुई है, वहीं जन जीवन में बाधक प्राकृतिक घटनाओं पर पूर्ण नियंत्रण नहीं पाया जा सका है। अतः प्राचीन काल में श्रावण मास में वर्षा के कारण लोग कार्यों से अवकाश रखते थे और घर में रहकर वेदों व वेद व्याख्या विषयक ग्रन्थों का स्वाध्याय कर आध्यात्मिक व अन्य विषयों का अपना ज्ञान बढ़ाते थे।

प्राचीन काल में आज की तरह सभी ग्रन्थ मुद्रित रूप में सबको सुलभ नहीं थे। अतः लोग निकटवर्ती आश्रमों में जाकर रहते थे और वहां रहने वाले वेदज्ञ विद्वानों से जीवन के उत्थान से संबंधित उपदेशों का श्रवण करते थे। ऐसा करने से ही श्रावण मास व इसकी पूर्णिमा के दिन मनायें जाने वाला श्रावणी-पर्व सार्थक होता था। समय के साथ-साथ लोगों में आलस्य व प्रमाद बढ़ने के कारण हमारे ब्राह्मणों व इतर वर्णों में वेदों के अध्ययन के प्रति रूचि कम होती गई और श्रावण मास के स्वाध्याय पर्व का स्वरूप विकृत होकर रक्षा बन्धन पर्व इसका रूप बन गया। इस पर्व का रक्षा बन्धन रूप भी इस दृष्टि से सार्थक होता है कि हम ऋषियों व वेदज्ञ योगियों के आश्रमों में जाकर, उनसे ज्ञान प्राप्त कर, अपने जीवन की रक्षा करें। इसके लिए वेदों का ईश्वर, जीवात्मा व सृष्टि विषयक यथार्थ ज्ञान व उनका आचरण आवश्यक है। ऐसा करने से अविद्या का नाश व विद्या की वृद्धि सम्भव होती है। प्राचीन काल में चातुर्मास वा श्रावण मास में वेदाध्ययन व वेदों के स्वाध्याय का कुछ ऐसा ही स्वरूप प्रतीत होता है। कालान्तर में श्रावणी पर्व का यह स्वरूप भी नहीं रहा और इसका विकृत रूप बहिनों द्वारा अपने भाईयों व राजस्थान के वीर राजपूतों की कलाईयों पर रक्षा सूत्र बांधने ने ले लिया जिससे आवश्यकता पड़ने पर वह उनकी रक्षा कर सकें। इसका एक कारण यही प्रतीत होता है कि मुस्लिम शासन काल में जब नारियों पर अत्याचार व उनके अपमान की घटनायें होने लगीं तो बहिने अपने भाईयों व समाज के वीर पुरुषों को भाई बनाकर उन्हें रक्षा सूत्र बांधती थी। अतः अतीत में इस पर्व के अवसर पर वेदों के स्वाध्याय सहित अनेक परम्परायें जुड़ गईं और समय के साथ रक्षा बन्धन आदि का स्वरूप बदलने से वर्तमान परिस्थितियों में इसकी उपयोगिता भी कम व नगण्य सी रह गई है। जहां तक वेदों के स्वाध्याय व उसके अनुरूप आचरण का प्रश्न है, वह जितना पहले कभी उपयोगी था उतना ही आज भी है और आगे भी रहेगा।

श्रावणी पर्व वेदों के स्वाध्याय का पर्व है जिसे ऋषि तर्पण नाम भी दिया जाता है। ऋषि तर्पण का अर्थ ऋषियों को सन्तुष्ट करना व उनके ऋण से उऋण होना है। ऋषियों की प्रिय वस्तु वेदों का ज्ञान है जिसकी प्राप्ति वेदोपदेश ग्रहण करने व वेदों के स्वाध्याय से होती है। वेदों की रक्षा मानव जाति के अस्तित्व की रक्षा के समान महत्वपूर्ण है। अतः वेदों का संवर्धन व उसका अधिकाधिक प्रचार आवश्यक व अनिवार्य है। जो गृहस्थ व व्यक्ति वेदों के ज्ञान की प्राप्ति में स्वाध्याय आदि कार्यों में लगा है वह ऋषियों का प्रिय होता है। आजकल भी देखते हैं कि विद्यालय के अध्यापक उस विद्यार्थी को पसन्द करते हैं जो अधिक अध्ययनशील, चिन्तन, मननशील व अनुशासित होता है और जिसे पाठ्यक्रम का पूर्ण व अधिकांश ज्ञान होता है। अतः ऋषियों को सन्तुष्ट करने वा उनके ऋण से उऋण होने का एकमात्र उपाय यही है कि हम उपलब्ध वेद ज्ञान को बढ़ायें, उसका अध्ययन कर उससे अलंकृत हों, दूसरों में अधिकाधिक उसका प्रचार व प्रसार करें जिससे वेदों का उपलब्ध ज्ञान अप्रवृत्त होकर नाश को प्राप्त न हो।

हमने देखा है कि मध्यकाल में वेदों का ज्ञान प्रायः पूरी तरह से अप्रवृत्त हो गया था जिससे देश व संसार में अज्ञान का अन्धकार फैल गया। अविद्याजन्य मत-मतान्तर उत्पन्न हो गये जो आज भी समाप्त होने का नाम नहीं ले रहे हैं। आज भी लोगों में सत्य ज्ञान के प्रति प्रवृत्ति जागृत नहीं हो सकी है। यह आज के समय का सबसे बड़ा आश्चर्य है कि मनुष्यों में सत्य ज्ञान की प्राप्ति व उसके अभ्यास की प्रवृत्ति नहीं है। इसका परिणाम मनुष्य व देशवासियों को दुःख के अतिरिक्त अन्य कुछ होने वाला नहीं है। इसे ऋषि दयानन्द ने अपने ग्रन्थों में अच्छी तरह से समझाया है। वेद ज्ञान दुःखों से मुक्ति का कारण है। यदि वेद ज्ञान से शून्य होंगे तो हमारे आत्मिक व शारीरिक दुःख दूर नहीं होंगे। जब तक मुक्त नहीं होंगे, भिन्न-भिन्न योनिपयों में बार बार हमारा जन्म होता रहेगा। अतः वेदों व वेदों के व्याख्या ग्रन्थों का स्वाध्याय व उनका जीवन में आचरण ही ऋषि तर्पण है। यह ऋषि तर्पण इस लिए कहलाता है कि इससे हम ऋषि ऋण से मुक्त होते हैं। वेदों का स्वाध्याय व अध्ययन जितना अधिक होगा उतना वैदिक धर्म व संस्कृति उन्नत व समृद्ध होगी। स्वाध्याय वा ऋषि तर्पण का यह क्रम लगभग साढ़े चार मास चलता है जिसका आरम्भ उपाकर्म से और समापन उत्सर्जन से होता है। इस विषय में अधिक जानने के लिए आर्य विद्वान पं. भवानी प्रसाद लिखित **‘आर्य पर्व पद्धति’** का अध्ययन आवश्यक है।

वेद और यज्ञ का परस्पर गहरा सम्बन्ध है। सभी यज्ञ वेद मन्त्रों के पाठ व वेद मंत्रों में निहित विधियों के द्वारा ही होते हैं। अतः श्रावण मास में यज्ञों को नियम पूर्वक करना चाहिये। यज्ञ से हानिकारक किटाणुओं का नाश होता है। वायु की दुर्गन्ध का नाश होकर वायु सुगन्धित हो जाती है जो स्वास्थ्य के लिए लाभदायक होती है। अनेक प्रकार के रोग नियमित यज्ञ करने से दूर हो जाते हैं और यज्ञ करने से अधिकांश साध्य व असाध्य रोगों से बचाव भी होता है। यज्ञ के प्रभाव से निवास स्थान व घर के भीतर की वायु यज्ञाग्नि की गर्मी से हल्की होकर बाहर चली जाती है और बाहर की शीतल व शुद्ध वायु घर के भीतर प्रवेश करती है जो स्वास्थ्यप्रद होती है। वायु में गोघृत व वनौषधियों सहित मिष्ट व पुष्टिकारक पदार्थों की आहुतियां देने से उस वायु का लाभ न केवल यज्ञकर्ता को होता है अपितु वह वायु दूर दूर तक जाकर असंख्य लोगों को लाभ पहुंचाती है। जितने लोग लाभान्वित होते हैं उसका पुण्य भी यज्ञकर्ता को मिलता है। यज्ञ में वेदमन्त्रों को बोलकर आहुति देने से मन्त्र में निहित ईश्वर की स्तुति, प्रार्थना व उपासना सहित उसके अर्थों को जानकर उसके अनेक आध्यात्मिक व भौतिक लाभ भी यज्ञ करने वाले मनुष्य को प्राप्त होते हैं। इससे वेदों की रक्षा भी होती है। इसी कारण वैदिक धर्म में प्रत्येक पर्व पर यज्ञ करने का विधान है जिससे यह सभी लाभ यज्ञ कर्ता व उसमें उपस्थित लोगों सहित पड़ोसियों व दूरदेशवासियों को भी प्राप्त हो सकें। श्रावणी के दिन विशेष पर्व पद्धति के अनुसार यज्ञ आयोजित कर इसका लाभ सभी गृहस्थियों को उठाना चाहिये।

श्रावणी पर्व श्रावण मास की पूर्णिमा के दिन मनाया जाता है। हम अपने अनुभव के आधार पर कहना चाहते हैं कि श्रावण मास से आरम्भ कर चार व साढ़े मास तक वैदिक साहित्य का अध्ययन वा स्वाध्याय करना चाहिये, इससे वर्तमान व शेष जीवन सहित परजन्म में भी लाभ होता है, ऐसा सत्शास्त्र बताते हैं। इसके लिए सत्यार्थप्रकाश, ऋग्वेदादिभाष्यभूमिका, संस्कारविधि, आर्याभिविनय का अध्ययन कर ऋषि दयानन्द कृत ऋग्वेद व यजुर्वेद भाष्य का स्वाध्याय करना चाहिये। ऋग्वेद के अवशिष्ट भाग व अन्य वेदों पर आर्य विद्वानों के भाष्य का अध्ययन करना जीवन में अभ्युदय व निःश्रेयस में अग्रसर करता है। आर्य विद्वानों स्वाध्याय के लिए अनेक ग्रन्थों की रचना की है जिसके अध्ययन से मनुष्य निर्भ्रान्त स्थिति का लाभ प्राप्त करता है। यही जीवन का उद्देश्य भी है। इन्हीं शब्दों के साथ इस लेख को विराम देते हैं। ओ३म् शम्।

**-मनमोहन कुमार आर्य**

**पताः 196 चुक्खूवाला-2**

**देहरादून-248001**

**फोनः09412985121**